विषयः 'बिहार बाढ़' और उसके संभव उपाय (बैठक)

तिथिः 13. 10. 2008

स्थानः जनता हॉउस

विजय प्रतापः बिहार में आए पानी के प्रलय से जो विनाश हुआ उसे सिर्फ प्राकृतिक बाढ़ या प्राकृतिक विनाश का नाम नहीं दे सकते इसके लिए प्रकृति की अपेक्षा हमारे समाज की नासमझी ज्यादा जिम्मेदार है। लेकिन फिर भी हमें हर दुर्घटना के बाद कुछ इसी तरह की टिप्पणियां और आलोचनाएं सुनने को मिलती रहती हैं। इस समस्या के कारणों और उन्हें दूर करने के बारे में हमारे नीति निर्धारक, राजनैतिक कार्यकर्ताआ, शोधकर्ता, तकनीकी समझ रखने वाले नेता या अन्य रूपों में काम करने वाले कार्यकर्ता अलग–अलग तरीके से चिंतन–मनन करते हैं लेकिन फिर भी किसी की बात का असर नहीं हो रहा है क्योंकि वो अलग–अलग दिशा में जा रहे हैं। इसलिए हम आज की बातचीत को इन्हीं बिंदुओं पर केन्द्रित करना चाहते हैं।

इसके लिए हम दक्षिण एशियाई समाज में काम करने वाले सभी घटकों के सकारात्मक आयामों के साथ–साथ एक समूह के तौर पर काम करने वाले 'सैडेड' के विचारों और जमीनी स्तर पर काम करने वाले लोगों के विचारों के बारे में बात करेंगे। 'सैडेड' अर्थात हमारे और जमीनी स्तर पर काम करने वाले लोगों की प्रकृति में थोड़ा अंतर है। हम लोग विभिन्न मुद्दों जैसे भौगोलिक और पारिस्थितिकीय गरिमा के सवालों, विकास के सवालों और पूर्ण रोजगार आदि के सवालों को आपस में जोड़ने के सवालो पर बात या फिर संवाद करते हैं और उसे अमल में लाने का प्रयास करते हैं।

इस विषय पर शीर्ष स्तर पर देखें तो कुछ बौद्धिक लोग और निचले स्तर पर कुछ कार्यकर्ता भी काम करते हैं। मुझे लगता है कि भारत में इन दो रूपों में कुछ लाक्षणिक तरीके से विभाजन हुआ है, 'सैडेड' इन सवालों पर साझी समझ बनाने के लिए प्रयत्नशील है। इस दिशा में हम जो भी काम करते हैं उनके बारे में खुद बताते समय हमें बहुत तकलीफ होती है क्योंकि हम चाहते हैं कि हम अपने किये हुये कामों को गिनाये नहीं बल्कि हम इस तरह से काम करें कि हमारे किये हुए काम आपको स्पष्ट दिखाई भी दें और वो स्वयं अपने बारे में कहें। लेकिन अभी तक हम पूरी तरह से ऐसा कर पाने में संभव नहीं हो पाये हैं ऐसा क्योंकि हमारे कुछ निजी और सार्वजनिक काम भी होते हैं लेकिन फिर भी हम अपनी ओर से सभी तरह के प्रयासों में लगे हुए हैं।

हमारे साथ मिश्रा जी जैसे कई बुद्धिजीवी और वरिष्ठ साथी भी मौजूद हैं। इनके अलावा सुधेन्द्र और गोपाल और राकेश जी जैसे हमारे कई जानकारी साथी (रिर्सोस परसन) यहां पर मौजूद हैं जो कि अपने–अपने क्षेत्र में महारत हासिल किये हुए हैं और हम उनकी आपस में तुलना किए बगैर बिहार में बांध की समस्या पर एक खुली बातचीत करने और इस विषय में कैसे काम किये जा सकते हैं ताकि समाज के नीति निर्धारकों की दिशा बदल जाये जैसे विषयों पर कुछ व्यवहारिक बातों पर भी खुली चर्चा करना चाहते हैं और हम चाहते हैं कि इस चर्चा की शुरूआत मिश्रा जी जैसे बुद्धीजीवी करें तो अच्छा होगा उनके अलावा हमारे साथ सुधिरेन्द्र और गोपाल जी हैं जो कि कई स्वंयसेवी कामों से जुडे हुए हैं और वो स्वंय नियुक्त स्वंयसेवक बनना चाहते हैं ये सैडेड के कामों से भी जुड़े रहे हैं। इनके अलावा हमारे साथ आसित जी भी हैं जिन्होंने दस साल तक एन.ए.पी.एम. के साथ काम किया है, अभी हाल ही में इन्होंने सामाजिक पारिस्थितिकीय के सवाल पर एक मेल पेपर लिखा है जिसके बारे में हम निकट भविष्य में चर्चा करेंगे। हम लोग अनौपचारिक या व्यवहारिक स्तर पर आप लोगों से कुछ मार्ग–दर्शन चाहते हैं जिससे आगे के चार–पांच सालों के लिये एक

विस्तृत परिदृश्य स्पष्ट हो जाये। आज की हमारी बातचीत की शुरूआत मिश्रा जी करेंगे।

मिश्रा जीः दोस्तो! मुझे ये बात स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि मेरे पास बहुत ही सीमित ज्ञान है। मैं पिछले कई वर्षों से पानी के सवाल पर काम कर रहा हूं और ऐसा करने का मेरा पास एक निश्चित उद्धेश्य भी था क्योंकि मैंने देखा कि लोग अक्सर सूखे पर, खनिज, पानी पर, अतिरिक्त पानी पर बात करते रहते हैं और इस बारे में हमारे पास कुछ खास ज्ञान नहीं होता है, और काम करने के लिए सामर्थ्य की भी कमी होती है। इसलिए इस क्षेत्र में हमारे लिए खुला मैदान था इसलिए हम अपनी तरफ से जो कुछ कर सकते थे, कह सकते थे वो हमने समय–समय पर किया भी और खासतौर से तकनीक को लेकर जो विवाद चलता रहा उसमें मेरी रूचि जरूर थी उसके लिए मैंने काफी शोध और अध्ययन किया और मुझे लगता है कि किसी भी तरह का अध्ययन और शोध बेकार नहीं होता। इस विषय में हम बहस करते आये हैं और वो बहस इंजीनियरों के बीच में चलती है और उसी तरह से वो एक–दूसरे की बहुत आलोचना भी करते हैं। और इस आलोचना में जिसके पास सत्ता है, जिसके पास असीम संसाधन हैं वो हमेशा जीतता आया है चाहे दूसरा पक्ष सही बात कहता भी हो लेकिन वो हारता ही है और सत्ता और संसाधन वाला हमेशा जीतता ही है।

हमारे पास बहस करने के लिए अनगिनत विषय हैं लेकिन फिर भी हम एक–दूसरे पर दोषारोपण करते चले जाते हैं। लेकिन इंजीनियरिंग संस्थान में बात करने का एक मंच दिया जाता है और इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि वो बात बाहर न जाये, ऐसा होता है कि इंजीनियरिंग संस्थान की सदस्यता लेते समय ही एक समझौता पर हस्ताक्षर करने पड़ते हैं ताकि यहां की बातें बाहर न जायें और हस्ताक्षर करने वालों की सूची में मेरा नाम भी मौजूद है। वो एक दायरा बना लेते हैं और मुझे लगता है कि वो एक बड़ा दायरा होता है।

ये एक इंजीनियरिंग सवाल है और मुझे लगता है कि वो सहज बुद्धि और गणित है और कुछ भी नहीं। इंजीनियरिंग बुद्धिविहीन गणित है। हमारे पास सहज बुद्धि हो सकती है लेकिन वो गणितीय योग्यता नहीं होती जिससे हम सारी चीजों की गणना करके बता सकते हैं। यदि इंजीनियर के पास सहज बुद्धि न हो तो उसकी कुशलता का क्या होगा ? कम्प्यूटर कुशलता का क्या होगा ? तो हम बहुत ही छोटे स्तर के लोग हैं हमारे पास कम्प्यूटर कुशलता नहीं है लेकिन सहज बुद्धि है और वहीं जिसके पास कम्प्यूटर कुशलता हो लेकिन सहज बुद्धि न हो तो वो क्या कर सकता है ? शायद कुछ भी नहीं क्योंकि सहज बुद्धि के बारे में तो पढ़ाया नहीं जाता है और ऐसे आदमी के कारण हमें और समाज को बहुत कुछ बुरा भुगतना पड़ता है। वही हाल सत्ता का भी उसके पास कम्प्यूटर कुशलता है, संसाधन हैं लेकिन सहज बुद्धि नहीं है। तो ऐसी स्थिति में एक विचित्र सा प्रश्न खड़ा होता है जो कि बहुत ही रोचक होता है। जिसके कारण कई बार हम तकनीकी ज्ञान के मालिक होते हुए भी ऐसे निर्णय लेते हैं जिसमें सहज बुद्धि कहीं पर भी दिखाई नहीं देती है। उस समय हमारी स्थिति बहुत ही विचित्र हो जाती है।

वैसे हमारे यहां तटबंधों का मामला है, एक सीधा सा सवाल है उन्होंने कहा था कि जब हम नदी को बांध देंगे तो पानी नहीं फैलेगा। ये सही बात है कि वहां पानी नहीं फैलेगा लेकिन यहां सहज बुद्धि का इस्तेमाल करना चाहिए था कि अगर पानी नहीं फैलेगा तो बाहर का पानी अंदर आ सकता है, उन्होंने कभी सोचा ही नहीं कि दरवाजा बंद करने से जो पानी आयेगा वह बाहर जमा हो जायेगा जो एक कम्प्यूटर ज्ञान है और वह अधूरा है। उन्होंने बाहर के बारे में सोचा ही नहीं। जो नदी हमारे चारों तरफ घूमती थी हमने उसे चारों तरफ बांध दिया,उसे कैद कर दिया। ये तो वही बात हुयी कि जैसे कि हमने अपना मकान किराये पर दिया और फिर किरायेदार मकान को खाली ही नहीं कर रहा है। हम उससे प्राथर्ना करते हैं, रायल्टी देने का प्रयास करते हैं लेकिन जब किसी भी बात का फायदा नहीं होता तो कानून की मदद लेते हैं जब उससे भी कुछ नहीं होता तो हम उसके पीछे 'गुंडे' लगाते हैं जो कि 'आखरी

उपाय' होता है। गुंडा मकान तो खाली करवा देगा और किरायेदार चला भी जायेगा लेकिन फिर वहां पर गुंडा बस जायेगा। अब यदि आपको उस गुंडे से निजात पानी है तो उसके लिए उससे बड़ा गुंडा लाइये। इसी तरह हमने नदियों के साथ भी किया है हमारे यहां जो नदियां इधर–उधर बहती थीं उससे जो आपदा होती थी उसे हमने पहले तो बहुत बर्दाशत किया, उसपर बहुत बहस की और बहुत कुछ किया लेकिन कुछ भी नहीं हुआ तो हमने भी 'गुंडा' लाकर बैठा दिया। चाहे नदी का रुख कैसा भी रहा हो उससे बाढ़ तो चली गयी, लेकिन अब वो गुंडा बैठ गया और अब वो जो कुछ भी करेगा या तो आप उसे भुगतिये या फिर उससे बड़े गुंडे का इंतजाम करिये। और हम लोगों ने दूसरे 'गुंडा' भी खोज लिया है। वह बड़ा गुंडा है 'नेपाल में बांध बनाने की बात'। यदि आप इस बात को किसी भी इंजीनियर से कहें तो वह तुरंत ही कह देगा कि हमें साइट (जगह) दे दीजिए और हम बांध बना देंगे। लेकिन सवाल इस बात का है कि तुम्हें साइट (जगह) देगा कौन? इस मामले में तुम्हारी पहली बुनियाद अर्थात 'जगह देने' की बात ही गलत है।

किसी भी इलाके के लोग यह कह सकते हैं कि इतना बड़ा नेपाल है तो फिर वो ही अपनी जगह क्यों दें ? कैप्टन हॉल नाम के इंसान ने बांध बनाने की बात पर कहा कि हमारे पास ढेर सारा पैसा है जिससे हम बहुत काम कर सकते हैं लेकिन हम ऐसा काम करें जिससे हम उसके परिणाम के प्रति आश्वस्त रहें। ये तो संदेह की बात है कि बांध बनने से बाढ़ का समाधान हो जायेगा या नहीं। एक तो आपके पास पैसा नहीं है और यदि आपने परियोजना में पैसा लगा दिया और उसका बेहतर परिणाम न निकला तो भी ठीक बात नहीं है। दूसरी बात उन्होंने यह कही थी कि हम कभी भी भारत के फायदे के लिये अपने–आपको असुविधा में नहीं डालेंगे।

कैप्टन हॉल ने इस बात को विस्तार से नहीं कहा। और यदि उस समय उनकी जमीन पर बांध बना तो वहां विस्थापन होगा और इसमें कुछ अच्छी जमीन पर लोग बसे हुये हैं जिससे उन्हें उठाना पड़ेगा। यदि हम नेपाल की बात छोड़ दें तो आज भी

हम मानते हैं कि नेपाल की सरकार और नेपाल के लोग दो अलग–अलग चीजें हैं। हमारे यहां भी 'भारत सरकार' और 'हम लोगों' में फर्क है। इसके लिए मैं एक शेर कहूंगा 'वो मेरी तकदीर का मालिक था पर वो मेरा न था' इसी प्रकार नेपाल की सरकार नेपाल की मालिक है लेकिन मेरी नहीं है। मैंने इस अंदाज में पहले कभी नहीं सोचा था। मालिकाना अधिकार उनके पास जरूर हैं, और ये भी हो सकता है हम उनके जागीर के हिस्से हों लेकिन वो हमारे हिस्से नहीं हैं। ये बात अगर नेपाल सरकार मान भी जाती है लेकिन नेपाली जनता इस चीज को न मानें तो बड़ा मुश्किल हो जायेगा।

इस मामले में आप नर्मदा की बात ले सकते हैं वहां बड़े आंदोलन हुये, वो हमारे अपने देश का मामला था, अपने समाज का मामला था। उसमें कोई तीसरा पक्ष शामिल नहीं था। फिर भी कहीं डूबेगा और कहीं फायदा होगा वाली स्थिति थी। और यहां तो नेपाल वाले मामले में तो अलग देश का मामला है। हमारे हित और उनके हित अलग हैं दूसरी बात यह है कि इन बांधों को बनाकर हमने जो कुछ भी काम किया उसका अंजाम कहीं न कहीं नेपाल ने भुगता और इस साल तो उसने जो कुछ भुगता वह स्पष्ट है।

इस बारे में मेरी अपने कुछ नेपाली मित्रों से भी बातचीत होती रहती है। अब से कुछ समय पहले मैंने एक लेख लिखा था जिसमें इस बात का जिक्र किया था कि 'जब 'कोशी' में तटबंध बने, तब लोगों ने एक नारा दिया था कि 'आधी रोटी खायेंगे' कोशी में बांध बनायेंगे। जब वह लेख किसी नेपाली भाई के पास गया तो उन्होंने लिखा कि 'हम 'पूरी रोटी खायेंगे और बांध नहीं बनने देंगे'। रोटी भी पूरी खायेंगे और अब वो बांध बनने नहीं देंगे। तो इन बातों से स्पष्ट है कि अब बांध के विषय में कुरूक्षेत्र होने वाला है। और सब लोग जानते हैं कि जहां बांध टूटा वहां उसने 30 लाख लोगों को बर्बाद कर दिया। सरकार के अनुसार वहां पांच जिलों में इसका असर हुआ है लेकिन हम मानते हैं कि वो सात जिले हैं और अभी भी लोग वहां फंसे हुये हैं,

केवल कोसी के पानी में तीस लाख लोग फंसे हैं। अब सवाल यह है कि यदि यह पानी 30 लाख लोगों के ऊपर से नहीं गया होता तो कहां जाता या कहां गया होता? क्या वह सुरक्षित जगह से जा रहा था? क्या उससे कोई नुकसान नहीं होता ? क्या यह एक सर्वमान्य समाधान था? इसके बारे में कोई भी बात नहीं करता। अगर पानी वहां नहीं जाता तो कहां जाता? हममें से कुछ लोग पिछले साल देखकर आये थे, हम तीन लोग बैठे थे और देखा कि पानी कोसी के तटबंधो के बीच से जा रहा था। यहां करीब 12 लाख लोग रहते हैं और 414 गांव हैं जिनमें 380 गांव हमारे हैं और 334 गांव नेपाल के और यह पानी इन गांवों के लोगों के सिर से हर साल गुजरता है और उसके समाधान में कुछ भी नहीं किया जाता।

राकेश जी: कोसी का तटबंध 1963 में बनकर पूरा हुआ था। जिसे बने हुए लगभग 45 साल हो गये हैं। बैराज 63 में बनकर पूरी हुयी। उस समय सरकार ने पहली बार यह दावा किया था कि अब गांव में किसी को नदी पार नहीं करनी पड़ेगी। अब वहां बैराज है और उसके ऊपर पुल बना है आप उसके ऊपर से आराम से जाइये और अब किसी का जीवन असुरक्षित नहीं है। आज इस दावे को किये हुए 45 साल हो गये लेकिन 45 साल में वह तटबंध 8 बार टूटा, जब वह सबसे पहली बार नेपाल में टूटा था तो उसमें करीब ढ़ाई–तीन सौ लोग प्रभावित हुए थे फिर जब वह 1968 में टूटा तो उसमें करीब 200 गांव प्रभावित हुये थे और उसमें करीब–करीब 50 लाख की आबादी आयी थी जिसमें खगड़िया, समस्तीपुर, दरभंगा का कुछ हिस्सा और सहरसा भी शामिल था। इसके अलावा नवगछिया भागलपुर आदि सारे इलाके प्रभावित हुये थे जिसमें करीब 50 लाख लोग प्रभावित हुए थे। लेकिन तब ये पानी केवल कोसी का ही नहीं था उसमें कमला और बाघमती भी मिली हुयी थी। तो इस प्रकार यह 1963 में बना और पहली बार तभी टूट गया उसके बाद दूसरी बार 68 में दरभंगा के जमालपुर में पांच जगह से टूटा था। और वह पानी दरभंगा, सहरसा, समस्ती पुर, खगड़िया, नवगछिया, भागलपुर आदि इलाकों में घुसा और वो डूब गये यदि उसमें आज के नए बने जिले शामिल करें तो उसमें मधुबनी दरभंगा का हिस्सा था। सहरसा जो कि सुफौल का हिस्सा था इस

तरह से पानी से बच नहीं सका। इसके बाद यह 1971 में टूटा तब उसमें 9 गांव आये थे उसमें तीस हजार से ज्यादा लोग फंसे होंगे। उन गांवों में जग्गनाथ मिश्रा का मूल गांव और बसावल पट्टी के रहने वाले ललित नारायण मिश्रा का गांव उस तट बंध के ठीक बाहर वाला गांव था। हमने उन गांवों वालों से कई साल पहले बात की तो उन्होंने कहा साहब हम तो अपना गांव छोड़ कर कहीं नहीं जाते बांध बनते जा रहे हैं, उन्होंने कहा कि हमें चारों तरफ बांधों से घेर दीजिए और वो 9 गांव अंदर रह जायेंगे। उसको मतौनी एप्रोच बन कहते थे, उससे वो सारे के सारे 9 गांवों के बारे में पता चल गया फिर उनको उठकर बाहर जाना पड़ा और उनको बाहर बसाने की बात की गयी। बसाने का अर्थ था उनकी जमीन पर कब्जा करना लेकिन उन्होंने कहा कि हम अपना इंतजाम खुद कर लेंगे। उनका कहना था कि हमारी कुछ जमीन तटबंध पर चली गयी, कुछ जमीन पुर्नवास में चली गयी, कुछ जमीन के ऊपर से नहर निकाली गयी तो वो चली गयी अब जो बची–खुची जमीन है अगर वो हमारे नये पुर्नवास में चली जाती है तो हम बर्बाद हो जायेंगे हमारे पास कुछ बचेगा ही नहीं। लेकिन वो बात आयी गयी हो गयी।

उसके बाद 1980 में बांध टूटा था वह एक विचित्र घटना थी। हम लोग खगना जिले में हैं जो कि खगड़िया के पास है। वहां नदी के तटबंध ने करीब ढाई किमी. बांध को काटा तथा काट कर उतर गयी। तो जो पानी बाहर जमा था वो अंदर आ गया अंदर का पानी बाहर मिल गया उससे किसी का नुकसान नहीं हुआ सिवाय इसके कि सरकार को उसकी मरम्मत में पैसा खर्च करना पड़ा।

फिर उसके बाद जब यह टूटा तो यह नहट्टा के सहरसा जिले में टूटा जिससे 90 गांव प्रभावित हुये और सीधे पांच लाख लोग उजड़ कर तटबंध में आ गये। तो वो एक बड़ी घटना हुयी। इसके बाद 1987 में पूरा बिहार पानी में था वो तो अलग चीज है। जमालपुर के रास्ते में तटबंध टूटा। उस साल बिहार में 2 लाख 86 करोड़ लोग बाढ़ में तबाह हुये लेकिन फिर भी उसे राष्ट्रीय आपदा घोषित नहीं किया गया और

आज 45 लाख या 30 लाख विपदा बन जाती है। उसके हिसाब से तो हमारी पिछली जितनी बाढ़ें हैं उनको राष्ट्रीय विपदा घोषित होना चाहिए। मौटे तौर पर हम लोग 30 लाख या 45 लाख लोगों के प्रभावित होने को कुछ होना ही नहीं मानते हैं। इस बार इसे राष्ट्रीय आपदा इसलिए कहा गया क्योंकि इसमें 30 लाख लोगों के ऊपर से पानी गुजरा था जिन्हें इसकी आदत नहीं थी।

इस प्रकार 87 में एक घटना हुयी, 91 में हुयी और 1991 में ठीक वही हुआ जो कि 87 में हुआ और 80 में हुआ था। नदी से बांध कटा और वह वापस चली गयी, बांध तो उड़ा दिया। बांध के मरम्मत में पांच करोड़ 27 लाख रुपये खर्च हुये लेकिन जान–माल का कोई खतरा नहीं हुआ। पानी बाहर गया। यह घटना लालू जी के जमाने में हुयी थी और 91 में बढ़ गयी। 'लालू भैया' बहुत मुखर हैं, उनके जमाने में कुछ नहीं हुआ, कहते हैं उन्होंने नदी को संभाल कर रखा लेकिन उनसे पूछा जाए कि यदि उन्होंने उसे संभाल कर रखा था तो आपके जल संसाधन मंत्री ने इस्तीफा क्यों दे दिया था और 5 करोड़ 27 लाख रुपये किसके लिए खर्च किए गए थे? ये सब बातें उनसे पूछी जानी थी लेकिन नहीं पूछी गयीं।

अब सवाल यह उठता है कि पानी पर इस तटबंध को बने हुए 45 साल हो गए और यह 8 बार टूटा है, यह 37 बार सलामत रहा लेकिन जिस साल सलामत रहा उस साल भी 12 लाख लोगों के ऊपर से पानी गया। 1951 में उनकी आबादी एक लाख 92 हजार थी, और आज 12 लाख है। तो उस समय एक लाख 92 हजार लोगों के ऊपर से पानी जाता था आज 12 लाख के ऊपर से जाता है। लेकिन उसके बारे में आज तक किसी ने भी नहीं पूछा। यहां तक कि इस इलाके में किसी एन.जी.ओ. के लोग, कोई राजनैतिक पार्टी भी नहीं गई। उन लोगों के पास जाकर पूछें तो वो कहते हैं कि हर साल यह पानी हमारे सिर से गुजरता है लेकिन किसी को पता ही नहीं चलता और आज जब यह पानी बाहर टूटा तब न केवल हमारे देश को बल्कि विदेशों में भी इस बात का पता चल गया और इसे राष्ट्रीय विपदा घोषित कर दिया गया।

यदि आप 28 अगस्त के सरकारी आंकड़े देखेंगे तो उनके अनुसार प्रभावित लोगों की संख्या एक लाख आठ हजार के करीब है। ये अलग बात है कि 30 लाख के 30 लाख लोग प्रभावित हुए हों और सरकार को पता न चला हो। पानी को बढे हुए दस दिन हो गये पानी को जहां पहुंचना था वो वहां पहुंच भी गया लेकिन सरकार को पता ही नहीं कि कितने लोग प्रभावित हुए। आंकडों में देखें तो वो संख्या एक लाख 65 हजार या एक लाख आठ हजार तक कुछ ऐसी ही संख्या है। उस पर वो राष्ट्रीय विपदा की घोषणा होती है। लेकिन यहां पर हर साल 12 लाख लोग अंदर फंसे ही रहते हैं लेकिन उसके बारे में कोई भी बात नहीं होती। वो लोग कहते हैं कि इस साल बड़ा अच्छा हुआ कि कम से कम बाहर वालों को पता लगा।

हमारी आबादी 12 लाख है और प्रभावित लोगों की आबादी 30 लाख अर्थात हमसे ढ़ाई गुना ज्यादा। अगर कोई स्वयंसेवी संस्था प्रति व्यक्ति 100 रुपये खर्च कर रही है तो क्या अगले साल वो हमारे लिये 40 रुपये खर्च करेगी। तब तक वहां पर तटबंध सलामत हैं तब तक वो 15 और 30 की लड़ाई शुरू हो रही है। अंदर वाले कहते हैं कि हम सब कुछ मिलाकर 15 लाख हैं सरकार कहती है बाहर तीस लाख हैं वो जैसे–जैसे बांध पर मिट्टी की एक–एक टोकरी पड़ेगी वैसे–वैसे 12 लाख लोगों की किस्मत पर बोझा बढ़ेगा। जिस दिन वह बांध पूरा हो जायेगा। उस दिन उन लोगों के मरने के लिए एक नुस्खा लिख दिया जायेगा कि तुम लोग अगले साल मरने के लिए तैयार हो जाओ उनके बारे में कभी भी कोई बात नहीं होती। ये एक बड़ा सवाल है क्या हम उन 12 लाख लोगों के लिए कोई समाधान निकाल सकते हैं जो 12 लाख और 30 लाख लोगों दोनों को ही स्वीकार हो।

जहां तक मेरा ख्याल है सरकार इस बारे में कुछ सोचती ही नहीं है। उस पर तटबंध के टूटने का दबाव है, उसे बंद किया जाए अगर खुला रहेगा तो अगले साल नेपाल की पांच पंचायतें और प्रभावित होंगी और वो इस पचडे में कभी भी फंसना नहीं चाहेंगे। दूसरी बात, यह बांध नेपाल में बैराज से 13 कि.मी. उत्तर से टूटा है। अगर

यही 13 किमी. दक्षिण में टूटा तो आप और हमें मिलकर बात करने की जरूरत नहीं पड़ती। फिर वही 'घर की बात घर में रह गयी'। 'हिन्दुस्तान' का मामला है टूट गया है तो टूट गया। लोग बहते हैं तो बह जायें, बर्बाद होते हैं तो हो जायें इसमें दूसरा कोई शामिल नहीं होता। इस साल की बाढ़ का एक ही दुखद या सुखद पहलू है कि अर्न्तराष्ट्रीय समस्या होने के नाते इस पर सबकी नजर पड़ी। वरना वही मीडिया, वही राजनीति, वही पर्यावरण पर काम करने वाले, वही एन.जी.ओ. जो कभी उस इलाके को घास तक नहीं डालते तो वो इलाका खत्म हो जाएगा। यदि आप वहां के बी.डी.ओ. से ब्लाक के नक्शे मांगेगें तो उसमें जिन ब्लाक के यह गांव बाहर या अंदर पड़ते हैं उन्हें गुलाबी या पीले रंग से रंगा होता है। बाढ़ वाला सफेद रंग से तथा अंदर वाला गुलाबी रंग से रंगा होगा और यदि आप उनसे पूछेंगे कि अंदर वाला क्यों रंगा है तो वो बालेंगे कि यहां पर विकास का कुछ काम नहीं हो सकता ये अंदर वाले हैं। 12 लाख लोगों को किसी भी विकास की जरूरत नहीं है।

वैसे इसमें कुल कितने गांव शामिल हैं ?

दिनेश मिश्राः हमारे 300 गांव और नेपाल के 34 गांव। 414 गांव तटबंध के अंदर है। करीब–करीब इतने ही लोग तटबंध के बाहर जमाव झेलते हैं उनकी जमीन बांध में फंसी होती है उसको भी जोड़ लेते हैं वो हम भी 30 लाख वो भी 30 लाख। जहां बांध टूट कर पानी पहुंचा वह भी 30 लाख जहां कोसी बहती है वह भी तीस लाख। अब आप ही उसका हिसाब निकालिए और उनके लिए कोई सर्वमान्य नुस्खा निकालिये। अवसर्वमान्य न होने का मतलब है कि अंदर के लोग शायद 16 अक्टूबर को वहां जमा होंगे जहां टूटा है हम इसको बंधने नहीं देंगे। और बाहर के तीस लाख लोग 30 अक्टूबर को अपने नुमाइंदों के साथ इसलिए आयेंगे कि इसे बिना बांधे छोडेंगे नहीं। सरकार किसके साथ खड़े हैं और हम आप किसके साथ खड़े हैं ? हम 16 के साथ हैं या कि 30 के साथ, ये निर्णय हम लोगों को भी करना होगा कि इस बारे में एक सर्वमान्य समाधान निकाला जा सके। इसका सीधा सा अर्थ ये है कि वो लोग 'समस्या'

को टाल रहे हैं। इसका समाधान नेपाल में ही निकलेगा। वो चाहे बांध बनाये या नदी के पानी को विभाजित करें। जो कुछ भी करना चाहे यह नेपाल को ही करना है। नेपाल को इस समस्या से केवल इतना ही मतलब है कि उसके 75 हजार आदमी बचे रहें। बाकी उसको किसी भी बात से कोई लेना–देना नहीं।

हर साल नेपाल से कोई आता है इस साल प्रचण्ड आये हैं और कौन वहां से आया या यहां से गया ये तो नवम्बर तक ही पता चलेगा। तीन योजनाओं पर सहमति बनी है यह तीन योजनायें भारत को मिली हैं। और तीनों के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में याटिका दायर है कि विदेशियों को नहीं मिलना चाहिए। हम विदेशी हैं लेकिन अगर किसी तीसरे को जैसे अमेरिका को मिल जाता है तो कोई हर्जा नहीं है लेकिन भारतीय को नहीं मिलना चाहिए। और वो लोग भारतीय साम्राज्यवाद का विस्तार मानते हैं। वो हमारी बिजली और पानी का प्रयोग करते हैं अभी हिंदुस्तान के साथ संभल कर रहने की जरूरत है। बड़ी विचित्र स्थिति है वहां कुल मिलाकर हम लोगों को लगता है कि सारे रास्ते बंद हो गये हैं। तटबंधों ने हमारा काम नहीं किया। वो बांध कब बनेगा कब नहीं बनेगा इसके बारे में हमें कुछ मालूम नहीं। लोगों का विस्थापन होगा लेकिन लोगों के लिए कुछ किया जायेगा ये भी कोई नहीं जानता। एक साफ रास्ता दिखायी देता है वो ये है कि सरकार के पास जो 10,000 इंजीनियर हैं उनको बुलाकर कहें कि ये दो बाउन्ड्री हैं दो में बनी हुयी हैं। नेपाल के बांध का भरोसा नहीं है। तटबंध काम नहीं करता है। आप कोई समाधान सुझाइये वो दो चार समाधान सुझायेगें। दूसरी बात यह थी कि बाढ़ जिस भी रूप में आती है उसे आने दो उसका मुकाबला स्थानीय तौर पर करें। जिसके लिए हम अभी भी सक्षम हैं।

हमारे यहां ‘राहत पुर्नवास मैनेजमैंट ’ होता था जिसके नाम को 2002 में बदल कर ‘आपदा प्रबन्धन’ कर दिया। हमारे सिंचाई विभाग का नाम बदलकर ‘जल संसाधन विभाग’ कर दिया। अगर नाम बदल देने से समस्या का समाधान हो जाता और आपका कृतज्ञ वही रहता है जो पहले वाला है। तब हम समझते हैं कोई समाधान नहीं होने

वाला है। आप मुझे दिनेश मिश्रा न कह कर झींगुर मिश्रा कहिये फिर भी मैं वही रहूंगा जो मैं हूं। अगर मेरा नाम बदलने से मेरे चिंतन में कोई बदलाव नहीं होता तो मेरा नाम बदलने से कुछ होने वाला नहीं है।

दूसरी बात, हमने आपदा प्रबंधन मंत्री के साथ पटना में पांच जून को एक बैठक के दौरान बातचीत की। जब मुझे बात करने का मौका मिला तो मैंने प्रश्न किया कि आपने आपदा प्रबंधन 'मंत्री' को तो बुला लिया 'आपदा आयेगी तो ये उसे संभालेंगे लेकिन जो आपदा पैदा करने वाला विभाग है 'जल संसाधन' उसके मंत्री कहां हैं? तो 'नीतिश मिश्रा' का कहना था हां उनको होना चाहिये। आयोजकों से पूछा गया कि क्या आपने उन्हें बुलाया था तो पता चला नहीं बुलाया था क्योंकि आपदा प्रबंधन की बात है। आपदा प्रबंधन तो आप करेंगे, जो पैदा करेगा उसको वहां नहीं बुलाया जायेगा। ये दोनों कभी भी साथ नहीं बुलाये जाते हैं जबकि उनको होना चाहिये। जबकि हमारा अपना मानना है कि 'जल संसाधन विभाग' 'आपदा प्रबंधन' के लिये रोजी–रोटी का इंतजाम करता है। उसकी कमजोरी से पानी कम बरसता है तो सूखा पड़ेगा यह भी जल संसाधन का काम है। पानी ज्यादा बरसता है, बाढ़ आती है यह भी जल संसाधन का काम है। दोनों लोगों को साथ होना चाहिये। जब भी जायें तो साथ जायें। लेकिन ऐसा कभी होता नहीं है और यह वही पांच जून का दिन था जब कोसी ने इस को काटना शुरू किया। तो उसके लिये मिश्रा जी ने कहा कि इसके लिए हमने सारी व्यवस्था कर दी है हमने सारे जूनियर इंजीनियर से लेकर सीनियर इंजीनियर, चीफ इंजीनियर के सारे पते लेकर सारे जगह फ्लैश करवा दिये थे। उसके बाद कोई दिक्कत होती है तो इससे संपर्क करिये और वह बांध 18 तारीख को टूट गया। 18 तारीख गया तो नीतिश मिश्रा का गांव 17, 18 किमी. दूर होगा। जहां पर बांध टूटा है। उनके गांव में 8 फुट पानी था हमारे कुछ गणमान्यों को मिश्रा जी ने फोन किया हमारे कुछ लोग फंसे हुए थे। कोई व्यवस्था कीजिये जिससे उन्हें निकाला जाये। उन्होंने कहा कि हमारे परिवार के 37 लोग फंसे हुए हैं हम कुछ नहीं कर पा रहे हैं तो अब हम आपसे क्या कहें? 'आपदा' तो 'प्रबंधन' को बहा कर ले गयी। और सभी विभाग

कुछ भी नहीं कर पाये। नीतिश मिश्रा अपने गांव गये कि नहीं ये भी मालूम नहीं। कम से कम महीने भर तक तो नहीं गये अब शायद गये हों।

बीच में पानी का स्तर बढ़ा है वह 168 से 188 तक गया है। लेकिन उसके बाद घटा है। अभी 40 के आस–पास है। अक्टूबर के अंत तक 30,000 तक पहुंचेगा। जैसे–जैसे पहुंच रहा है वैसे–वैसे दोनों ओर से ब्रिट बनने की बात आ रही है। मार्च के महीने में नदी नीचे आ जायेगी। तब इसको पार कर बराबर करेंगे।

आसीतः रेत जम गई जिससे खेती आदि के सभी काम बंद हो गए, इस बारे में मुआवजे की कुछ योजना है ?

मिश्रा जीः रेत इस साल जमा है। राहत फंड के भी अजीब तरह के नियम हैं। पिछले साल के नियमों के अनुसार यदि किसी परिवार को एक हेक्टेयर जमीन का नुकसान होता है तो उसके लिए 6 हजार रुपये का प्रावधान है। फिलहाल हमने इस साल की नीतियां नहीं देखी हैं। पिछले साल तक 6 हजार हेक्टेयर तक आपको मुआवजा मिलेगा। उससे आप बांध बना लीजिए या कुछ भी करिये। आज मेरे पास 10 हेक्टेयर जमीन है तब एक हेक्टेयर का मुआवजा मिलेगा उससे ज्यादा का नहीं मिलेगा। बी.पी. एल. वालों की एक स्कीम है यदि आपका घर टूटता है, गिरता हो तो उनके लिए इंदिरा आवास स्कीम के तहत मदद का आश्वासन है। जो पैसा उनको मिलता है वह इन्हें भी मिल जाता है फिर उस पैसे से वो कुछ भी करें। जानवरों के लिए प्रावधान है। अगर कोई गाय, बैल, भैंसा मरता है तो उसके लिये (10,000) दस हजार रुपये का मुआवजा मिलेगा। छोटे जानवरों के लिये कम मिलेगा बकरियों के लिए 1,000 है। मुर्गियों के 20–30 की राशि होती है। उसमें बर्तन–भांडे का इंतजाम है। अगर आपके घर का कोई आदमी मरता है तो उसकी लाश मिल जाती है उसकी शिनाख्त हो जाती है तब वह डेढ़ लाख रुपये का हकदार हो जाता है। पिछली बार नीतीश कुमार जी की नीति के अनुसार केंद्र सरकार से एक लाख आता है और बाकी का 50,000 उन्होंने

दिया। यदि किसी व्यक्ति को अपने रिशतेदार की लाश नहीं मिली तो इसका अर्थ है कि वो मरा ही नहीं है। जब तक लाश की पहचान नहीं हो जाती तब तक आपको मुआवजा नहीं दिया जा सकता। राज्य द्वारा मुख्यमंत्री फंड से पचास हजार रुपये आते हैं बाकी एक लाख सरकार की तरफ से आता है अर्थात पूरे डेढ़ लाख रुपये दिए जाते हैं।

असितः क्या कहीं पर खाद्य सुरक्षा की बात आती है ?

मिश्रा जीः देखिये खाद्य सुरक्षा के विषय में सी.आर.एफ. के प्रावधान के अनुसार सरकार 15 दिन के लिए खाने की व्यवस्था की घोषणा करती है। जिसमें सरकार आपको अनाज देगी। उसमें 50 किलो चावल या गेहूं तथा 5 किलो चाय का प्रावधान है। कुछ मामलों में नकद दिया जाएगा। नमक, तेल, मोमबती, माचिस इन सबका प्रावधान है। 15 दिन के बाद दोबारा जांच करेगी और यदि वह उचित समझे तो इस प्रावधान को 15 दिन के लिए और बढ़ा देगी। लेकिन सी.आर.एफ. का प्रावधान केवल मात्र एक महीने के लिए है।

आसितः यह तो राहत की बात हुयी कि रेत जम गया जिससे फसल खराब हुयी या फसल हुयी ही नहीं तो मुआवजा दिया गया लेकिन क्या उन लोगों के घरों में भी किसी तरह की खाद्य सुरक्षा का प्रावधान है ?

मिश्रा जीः क्या उस पर कोई प्रावधान नहीं है?

आसितः इस बारे में सरकार कुछ नहीं करती है वो तो केवल राहत देगी खाद्य सुरक्षा के बारे में तो आपको खुद ही सोचना होगा।

मिश्रा जीः जी हां ! बिल्कुल ठीक है।

सुधिरेन्द्र जीः यह बात तो है लेकिन लोगों को नकद के बदले चेक दे दिए जाते हैं। अब जब वो चेक को बैंक में जमा कराने जाते हैं तो उनसे पहचान मांगी जाती है जो कि पानी में बह गयी। तो ऐसे में वो ऐसे कैसे साबित करेंगे कि जिसके नाम से चेक दिया गया है वो वही आदमी है कि नहीं? ऐसे में राहत लेने वाला व्यक्ति करे तो क्या करे ?

आसीतः इनमें से 70 प्रतिशत लोग अपनी पहचान नहीं दे पाते हैं।

मिश्रा जीः मुझे लगता है कम से कम 90 प्रतिशत लोग अपना परिचय नहीं दे पाते हैं।

आसितः मिश्रा जी मुझे लगता है कि ऐसे में राजनीतिक भ्रष्टाचार होगा। सबसे पहली बात है कि सी.आर.एफ. का पूरे देश में पांच साल के लिए 23 सौ करोड़ रुपये का का प्रावधान है। अब आप उसे पूरे देश में बांट दीजिए।

सुधिरेन्द्र जीः 23 सौ करोड़ रुपये।

मिश्रा जीः प्राकृतिक आपदा का कुछ और ही प्रावधान है। उसमें बहुत ज्यादा प्रावधान नहीं है। उसमें आपको विशेष पैकेज मिल जाता है।

आसितः पटना कितना पहुचेगा? 90 प्रतिषत तो गायब हो जायेगा।

मिश्रा जीः कितना पहुंचेगा कितना नहीं यह दूसरी चीज है। लेकिन पिछली बार नीतिष जी ने इतना जरूर किया कि उन्होंने प्रभावित हुए ढाई करोड़ अर्थात पचास परिवारों में प्रत्येक के घर एक कुंतल अनाज पहुंचाया। अपने पिछले फंड से बाढ़ के लिये 955

करोड़ रुपये दिये। इस साल भी नीतिष कुमार कहते हैं पहुंचा देंगे। इसलिए उनका इंतजार हो रहा है, हम उम्मीद करते हैं कि एक महीने में अनाज पहुंच जायेगा।

आसितः किसान फसल नहीं उगा पायेगा तो फिर क्या होगा ?

मिश्रा जीः यदि वो फसल नहीं उगा पायेंगे तो उसके लिए कुछ नहीं किया जा सकता। अभी तक जमीन पर 6 फिट बालू है तो अगली बार तटबंध टूटने का इंतजार कीजिए हो सकता है कि वो बालू को बहा ले जाये और किसी दूसरी जमीन पर डाल दे। इसके अलावा ऐसा कोई भी इतिहास नहीं है कि जब बालू वहीं की वहीं रही हो।

सरकार से बातचीत हो रही लेकिन वो हमें पसंद नहीं करती है। हमने कहा जो घर बनाने वाला पैसा है जो इंदिरा आवास का जो पैसा है, ये ठेके में बनवाते हैं। इन्हें बिल्डिंग सामग्री की पूर्ति कर दीजिए। मजदूरी का पैसा हमें दे दीजिए हम अपना घर बना लेंगे। जो बनाने में समर्थ नहीं हैं वो दूसरे से काम करवा लेगें। यदि जमीन पर पड़ी बालू कहीं संभालने लायक है तो उसे किसी ओर स्थान पर डाल दीजिए। इसमें मजदूरी लगेगी और उनकी जमीन काम के लायक बन जायेगी।

उन्हें राहत दे दी गयी है उन्हें एक क्विंटल अनाज दे दिया गया है उसका अर्थ है 100 किलोग्राम अनाज जो कि करीब एक हजार या बारह सौ रुपये के करीब है। यदि मेरी प्रतिदिन की मजदूरी 80 रुपये है तो इतनी राशि को तो मैं 15 दिन में ही कमा लूंगा लेकिन मेरी रोजी तो हमेशा के लिए ही चली गयी और आपने मुआवजे के रूप में 15 दिन का अनाज दे दिया। आखिर यह कैसा इंसाफ है ? जिसपर बात जरूर होनी चाहिए। सबको लगता है कि उन्होंने बारह सौ रुपये देकर बहुत बड़ा काम कर दिया है लेकिन उन लोगों की तो तीन महीने की मजदूरी चली गयी उसके बारे में कोई बात ही नहीं करता। उनका घर और जमीन बर्बाद हुयी उससे कोई मतलब ही नहीं।

पिछली बार हमारी कई राजनीतिज्ञों से बातचीत हुयी उनके अनुसार हमने लोगों को अनाज पहुंचाकर उन्हें निहाल कर दिया। इससे लोग इतने निहाल हुए आखिर इससे पहले किसी ने इतना अनाज नहीं पहुंचाया था। पहले 12–13 किग्रा मिल जाता था तो काफी हो जाता था। ये सही है कि पिछली बार नीतिश कुमार ने ऐसा जरूर किया था उन्होंने प्रभावित परिवारों को एक कुंतल अनाज पहुंचाया था। वे इस बार भी ऐसा ही करने का प्रयास कर रहे हैं जिस तरह से बड़े कैंप लग रहे हैं और उनका मूल्यांकन हो रहा है उसे देखकर लगता है कि नीतिश कुमार ने अपनी जीत पक्की कर ली है। क्योंकि सबके दिमाग में ये होता है कि मुआवजे की रकम तो उड़ा ले जाने के लिए होती है और यदि वह लोगों तक पहुंची है या लोगों में बंटी है तो इसका अर्थ है कि सरकार ने हमें कृतार्थ किया। लेकिन ये अहम् मुद्दा है कि उन लोगों को 12 सौ करोड़ का अनाज मिला और उनकी तीन महीने की मजदूरी चली गयी ये बात उनके दिमाग में नहीं गयी। उसके बाद कितनी जमीन में बालू पड़ा है इसका तो कोई हिसाब ही नहीं है। पानी के बारे में भी धीरे–धीरे ही पता लगेगा कि वो किस रास्ते में जा रहा है। अभी तो चारों तरफ पानी ही पानी है जिसकी सही दिशा का अंदाजा अक्टूबर के अंत तक ही लगाया जा सकता है। इस विषय में वाद–विवाद हो रहा है पूर्णिया के एक इंजीनियर निहला गोरा ने 1896 में अपना एक लेख लिखा जिसमें उन्होंने लिखा कि 'कोसी' पश्चिम की ओर खिसक रही है और निश्चित है कि इस बार यह बहुत भयानक रूप से उत्तर की ओर जायेगी। लेकिन जैसे कैम्बल वायसराय थे उन्होंने कहा था कि कुछ भी बात कहने से पहले नाप–तौल लेना चाहिए। लेकिन इस बात के कुछ भी सबूत मौजूद नहीं हैं जिनसे ये पता चले कि कोसी धीरे–धीरे पश्चिम की ओर जा रही है। हो सकता है यह पश्चिम से पूर्व की ओर भी चली जाए। उन्होंने कहा था कि कोसी के बारे में यह बात पहले से ही कही जा रही थी कि उसका व्यवहार पुराने समय से ही ऐसा था कि वह किसी भी दिशा की ओर जा सकती है। इस साल सीलेमफोड़ की बात सही साबित हुयी, इस बार कोसी पूर्णिया में 120 कि.मी. पहुंची।

राकेषः कोसी का क्या है वो तो अपना रास्ता बदलती रहती है। वह 1810 के आस–पास पूर्व में थी उसके बाद वह पश्चिम में आ गयी। 1808 में बने पूर्णिया के नक्शे में कोसी को सीधा दिखाया गया था। और वैसा ही इस साल उत्तर और दक्षिणी ध्रुव की ओर हुआ। जार्ज कैम्बल ने कहा था इस बात के कोई भी सबूत नहीं मिलते हैं कि वो किस ओर निकलेगी क्योंकि पहले के अनुमान में वो झूठे साबित हुए थे और सलीम फोर्ड की बात सच निकली। उस समय जो बात नहीं थी वो अब हो गयी है। नदी तो नियंत्रण करती थी और चारों तरफ घूमती थी। जब थी तब नेपाल की एक इंच जमीन भी नहीं कटी। 1731 में उसकी मैपिंग मिलती है। और नेपाल के जंगलों पर हमारे पूर्णिया और सहरसा के जंगलों पर अंग्रेजों की कुल्हाड़ियां नहीं बरसी थी। तब रेलवे लाइन भी चालू नहीं हुयी थी। पहले रेलवे लाइन में लोहा इस्तेमाल नहीं होता था पहले लकड़ी इस्तेमाल होती थी। जिस तरह से रेल लाइन रुक जाती थी वहां ड्राइवर साहब रेल रोक देते थे पेड़ काटते थे और फेंक देते थे। उसमें हमारे जंगल साफ हुये। बाकी बचा वो पटरियों में चले गये। स्लीपरस् में चले गये। एक तो रेलवे का बहुत बड़ा उद्योग चला। लेकिन कोषी तब भी धारा बदलती थी, जब रेलवे लाइन नहीं थी और सारे जंगल सलामत थे। तो यह कहना कि जंगलों को दोबारा से स्थापित किया जाए ठीक सा नहीं लगता। क्योंकि नेपाल में तो उन्होंने इसे काट डाला है। यदि हम एक–दूसरे को जिम्मेवारी सौंपे तो उससे उसका कोई लेना–देना नहीं है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि ऐसा अभी हुआ है बल्कि ये तो काफी समय पहले से ही मौजूद था तभी तो वह घूम रही थी और उसके रास्ते तय नहीं थे। अब सवाल यह उठता है कि वो नदी वहां कब जायेगी। और अब भी यह होता है कि उसकी 15 धारायें हैं और उन 15 धाराओं में कौन सी मुख्य धारा कोसी में जायेगी पहले उसका एक पैर्टन था कि वो पश्चिम की तरफ जा रही है और दो साल बाद वह उसमें चली जायेगी और तीन–चार साल बाद वह किस ओर जायेगी, पांच साल बाद किसी और पैर्टन में जायेगी तो इसी प्रकार से चला आ रहा था। जब हमने बांध बनाये तब यह कहा कि इस धारा को स्थिर कर देंगे। नदी की दिशा आदि पर लगाम लगा देंगे। हमने नदी

की उस धारा को 'आवारा' कहकर पुकार और उसको सशक्त कर ऊपर चढ़ा दिया। जो नदी पूरी तरह से पूरे इलाके में पानी फैलाती थी और पूरे इलाके में अपनी बात फैलाती थी उसको मजबूत किया उसके अन्दर 15 धारायें थी उसको 10 किमी. में बहा दिया। जब वो बही तो सारी मिट्टी वहां जमा होने लगी जो नदी पहले से ही स्थिर थी इधर–उधर घूमती थी उसका बेल्ट लेबल ऊंचा कर दिया लेकिन पहले तो उसका पैर्टन मालूम था अब तो उसका पैर्टन भी नहीं मालूम कि वो अगले साल कहां बहेगी।

आसितः यह तो तकनीकी बात है यह तो सहज ज्ञान की बात है कि वो किस बार किस ओर जायेगी आदि।

शान्तुनीः वैसे तो वहां पर और भी नदियां बहती हैं, अब हुगली भी बढ़ने लगती है। लेकिन बाकी नदियों की तुलना में 'कोसी' कुछ ज्यादा ही अस्थिर है।

मिश्रा जीः हां ! बाकी नदियों की अपेक्षा कोसी का प्रवाह ज्यादा होता है। हमारी दो नदियां 'कोसी' और 'गण्डक' बड़ी नदियां हैं। कोसी का प्रवाह विस्तार सबसे अधिक अर्थात 9 लाख 13 हजार और 'गण्डक' का 7 लाख, बाकी नदियां 2 से ढ़ाई, तीन के बीच में रहती है। उनका बहाव कम होता है। और किसी भी नदी में आने वाली बाढ़ की स्थिति भी उसके विस्तार पर ही निर्भर करती है। पिछली बार हमारी टीम बाढ़ के दौरान बाघमती और सीतामड़ी जिले में गयी और उन्होंने देखा कि वहां मस्जिद की सिर्फ चोटी ही दिखाई दे रही थी जबकि पहले मस्जिद पूरी की पूरी जमीन के अंदर थी। जब हम कोई भी धार्मिक स्थल बनाते हैं तो देखते हैं कि वह जमीनी स्तर से ऊपर हो। आप कहीं पर भी कोई भी मंदिर या मस्जिद देख लीजिए सभी ऐसे ही होंगे। मस्जिद जमीन से कम से कम 6 फुट ऊंची रही होगी। मस्जिद बनी हुयी है उसके ऊपर मीनार बनी हुयी है। और वह मीनार हमारी आपकी ऊंचाई के बराबर है और वह पूरी की पूरी नदी में चली गयी।

राकेश जीः काले पानी का क्या हुआ?

मिश्रा जीः काला पानी अभी तक काला है और उसपर काम शुरू नहीं हुआ है। अभी मैं उन 12 लाख लोगों की बात कर रहा हूं जो वहां पर घिरे हुए हैं। वो लोग हमपर विश्वास करते हैं इसलिए शायद सहजतावश कुछ सवाल नहीं कर रहे हैं। लेकिन आमतौर से हमसे पूछा जाता है कि जो 12 लाख लोग अंदर फंसे हुए हैं वो खामोश क्यों हैं ? उन्होंने प्रतिवाद क्यों नहीं किया। यदि इस तरह से 12 लाख लोग फंसे हुये और लगभग हर साल ऐसी ही स्थिति होती है फिर भी सरकार पिछले 50 साल से कुछ नहीं कर रही है तो इससे स्पष्ट होता है कि वहां की सरकार तो अर्कमण्य है ही लेकिन वहां के लोग भी अर्कमण्य हैं।

कहीं ऐसा तो नहीं कि वहां के लोगों ने अपने–आपको भगवान के भरोसे छोड़ दिया है। लेकिन फिर भी वहां के लोगों में एक अच्छी बात है कि उनमें से किसी ने भी अभी तक खुदकुशी नहीं की है। बिहार के लोग महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, असम आदि शहरों में मार खाने तक के लिये चले गये हैं इससे तो ठीक है लेकिन यदि वो बिहार चले जाएं तो गृह युद्ध की स्थिति पैदा हो जायेगी। अभी मैं उड़ीसा की बात कर रहा था बिहार में ऐसा नहीं है। मैं आपको एक उदारहण देता हूं वो शायद 1982 की बात है वहां जबरदस्त सूखा पड़ा था। उड़ीसा के चारों तरफ मारवाड़ी लोग रहते हैं। वहां राजा मानसिंह के जमाने में बहुत से लोग मारे गये थे। वहां वलानगीर के एक मिश्रा जी को पता चला कि वहां कोई मिश्रा जी आये हुए हैं, वहां भी मिश्रा होते हैं लेकिन वो उड़िया बोलते हैं। मैं राहत कार्यों के सिलसिले में वहां गया था मेरे साथ वहां के एस.डी.ओ. भी थे। तो शर्मा जी ने अपना परिचय देते हुए कहा कि हम लोग यहां बहुत दिनों से हैं, हम लोग राजा मानसिंह के साथ ही यहां आ गये थे। हम तब से यहां जल, जंगल, जमीन को देखते हैं, खेती करते हैं, दुकान करते हैं। कुछ लोग व्यापार भी करते हैं। जब मैंने उनसे पूछा कि इन सब परिस्थितियों से आपके ऊपर कुछ असर पड़ा या नहीं ? तो उन्होंने जवाब दिया कि 'नहीं'। समान खरीदने के लिए लोगों

के पास पैसा होना चाहिए, लेकिन लोगों के पास वो है ही नहीं तो मेरी दुकान बंद हो गयी, मैंने अपने बीवी–बच्चों को राजस्थान भेज दिया और मैं यहीं पर रह रहा हूं। मैं किसी तरह से कमा–खा लूंगा। जब मैंने पूछा कि आपका सामान खरीदने वाला कोई नहीं है, खेती में कुछ भी पैदा नहीं हो रहा है, ऐसे में आप जिंदा कैसे रहोगे ? तो उन्होंने जवाब दिया कुछ नहीं, मैं किसी अफसर को दो तमाचे मारूंगा वो मुझे जेल में बंद कर देंगे और मैं वहां जाकर मौज करूंगा। खाऊंगा, पीऊंगा और मस्ती करूंगा।

तो मेरे साथ जो एस.डी.ओ. साह थे, उन्होंने मुझे कहा कि जल्दी चलो मैं यहां का राजपत्रित अधिकारी हूं और यहां पर अकेला मैं ही हूं इसलिए यहां से जल्दी चलो यदि तुम यहां से नहीं गए तो मुझे बहुत मार खानी पड़ सकती है। इसलिए हम वहां से जल्दी ही चले आए तो इससे गांव के लोगों की प्रतिक्रिया स्पष्ट होती है और इसके अलावा यदि किसी गांव में कोई भी पढ़ा–लिखा और अच्छे कपड़े पहने हुए कोई आदमी चला जाए तो गांव के लोग ऐसा नहीं कहते कि कोई पढ़ा–लिखा आदमी जा रहा है या कोई चोर जा रहा है वो तो यही कहते हैं कि इन्हें यहां आने की जरूरत क्या थी ये तो जरूर अपने किसी न किसी मतलब से ही यहां आया होगा आदि। इससे स्पष्ट होता है कि लोगों का गुस्सा उफान पर है, यदि उसमें थोड़ी सी भी चिंगारी डाल दो तो फिर वही होगा जो शायद 1974 में हुआ था और शायद उससे भी हिंसक हो।

सुधिरेन्द्रः वहां किसी के पास भी खाने के लिए कुछ नहीं है।

मिश्रा : जिसके पास खोने के लिए कुछ नहीं होता वह बहुत ताकतवर होता है।

आसितः माले वाले या मार्क्सवादी तटबंध के मुद्दे में नहीं हैं ?

मिश्रा जीः बाहर से तो नहीं लेकिन अंदर से हैं। एक बार उन्होंने हमें बुलाया, तो हम वहां गए तो वहां हमें कुछ अपने परिचित लोग दिखाई दिये उन्होंने हमसे पूछा कि हम यहां क्या कर रहे हैं तो हमने कहा कि हमें जो भी बुलाता है हम वहां पर पहुंच जाते हैं। इसके जवाब में उन्होंने कहा कि अब आपकी बिना वजह ही 'फाइल खुलेगी।'

राकेश जीः आपकी फाइल तो अच्छी खासी होगी ?

मिश्रा जीः होनी चाहिये। लेकिन शायद लाभदायक मूल्य नहीं है तो उनको कोई फर्क नहीं पड़ता है।

तो यदि आप दीवार को बांध देंगे तो पानी और मिट्टी नहीं फैलेगी। मिट्टी अंदर जमा होती जायेगी, तटबंध ऊंचा होता जायेगा लेकिन उसकी एक व्यवहारिक सीमा है एक सीमा के बाद आप उसे बनाए नहीं रख पायेंगे आप उसे जितना ऊंचा उठायेंगे नदी जमीन के ऊपर आ जायेगी।

दूसरा यह है कि आप नदी को खुला छोड़ दीजिए। और गांव और यहां तक कि पूरे शहर को घेर लीजिए। मिट्टी बाहर जमा होगी अंदर का इलाका सुरक्षित होगा अब अंदर बाढ़ नहीं आ रही तो मिट्टी भी नहीं आ रही। अंदर स्थिर है तो बाहर ऊंचा होता जा रहा है। आपने जो रिंग बनायी उसको ऊंचा करते जाइये। जैसे–जैसे उसको ऊंचा करते जायेंगे गड्ढा बढ़ता जायेगा। तो अगर वह टूटता है तो अंदर वालों को भागने का भी मौका नहीं मिलेगा। इस प्रकार से पानी निकलने का रास्ता नहीं बचेगा इसीलिए यदि इंजीनियर यह कहें कि हम इस गांव को बाढ़ से सुरक्षित कर देंगे तो हमारे–आपके पास उनकी बात को मानने के अलावा कोई रास्ता नहीं होगा।

हमें लगता है कि हमें सवाल करना ही नहीं आता है। सवाल इस बात का है कि बाहर मिट्टी जमा होगी उसको ऊंचा करना होगा, बाहर नाव चलने लगेगी आदि के बारे में हम अनुभव से ही सीखते हैं।

राकेश जी: उ.प्र. में गांव को ऊंचा किया जो कि तीसरा समाधान है। गांव को ऊंचा करने में जनता की भागीदारी हो।

विजय प्रताप: मुझे लगता है कि जब इन सब बातों के लिए आंदोलन होगा, इनमें जनता की भागीदारी होगी तभी कहीं जाकर नेतृत्व आयेगा और चीजें बदलेंगी। क्योंकि इसके बिना किसी काम को कर पाना बहुत कठिन होता है जैसा कि हम पिछले चालीस सालों से करते हुए आ रहे हैं लेकिन उसका सकारात्मक की अपेक्षा नकारात्मक परिणाम ज्यादा दिखाई देता है। कई बार हम उस काम को लगातार रूप से भी नहीं कर पाते हैं जिससे वो सफल नहीं हो पाता है। हमारे समाज में ऐसे कई अनुभवी लोग मौजूद हैं जो उस समस्या का कई तरीके से हल निकाल सकते हैं लेकिन या तो वो लोग आपस में संपर्क में नहीं आ पाते हैं या फिर वो विस्तृत रूप से बात नहीं करते। हमारे पास ऐसे कई कार्यकर्ता भी मौजूद हैं जो कि किसी भी समस्या के बारे में विस्तार से सोचते हैं लेकिन वो इक्ट्ठे नहीं होते हैं और वो साझे मन से जनता के बीच नहीं जा पाते हैं इस बारे में आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

सुधिरेन्द्र जी: हम लोग अभी तक अल्पसंख्या में हैं। हम मानते हैं कि हममें से कुछ लोग वहां जायें और वहां की स्थितियों को अच्छी तरह से समझ कर आयें। वरना बहुत थोडे से लोग ही अपने सीमित समझ के आधार पर एकमत हो जाते हैं और वो जिस स्थिति में काम करते हैं वो खतरनाक हो जाती है मैं उस स्थिति को एक उदाहरण के माध्यम से बताता हूं कि बिहार पटना में आयोग है हमारी उसके अध्यक्ष आदि से बात होती है वो कहते हैं कि वो बिहार में रहते और घूमते हैं, और वो जिस स्थिति या स्थान से उपाय देखते हैं उससे उपाय नहीं निकल सकता है। जैसे कि किसी को

थोड़ा सा बुखार हो जाता है लेकिन समय पर इलाज न होने पर उसकी स्थिति बिगड़ जाती है, तो आज कोसी की ऐसी ही स्थिति हो गयी है उसका पिछले 50 वर्षों में इलाज न होने से उसकी आज उसकी स्थिति बिगड़कर बहुत ही खतरनाक हो गयी है जिसका इलाज करना बहुत ही कठिन और जटिल है।

हमें याद है उस यात्रा के दौरान हमने कहा था कि पुरानी सोचों में बदलाव लाना होगा और चूंकि हम बाहर के थे इसलिए हमारी बात का विरोध हुआ और हमसे कहा गया कि आप ऐसा कैसे कह सकते हो ? तो वो लोग अपनी पुरानी सोच से बाहर नहीं निकलना चाहते हैं, हम लोग वैज्ञानिक तकनीकी आधार के लोग हैं और हम इस समस्या से बाहर निकलने का रास्ता सुझा सकते हैं लेकिन खुद वहां के लोग ऐसा चाहते ही नहीं हैं। जबकि कोसी की वर्तमान स्थिति उस ढांचे से बाहर निकलकर सोचने की मांग करती है। आज बाढ़ की जो जटिल स्थिति है वो वास्तव में वैसी नहीं है बल्कि उसे ऐसा बनाया गया है। इस बारे में होने वाला वाद–विवाद स्पष्ट नहीं होता है। हमने आपसे पहले ही कहा था कि अमेनबेन्ड तोड़ दो, नदी को बहने दो। हमने पटना में भी यही बात कही थी, तब हमें भी ये लगा था कि हम परिवर्तनकारी विचार दे रहे हैं। लेकिन नदी यह कहती है कि उसे बहने दो अगर उसे विभिन्न पक्षों में बहाओगे तो लोगों का स्थान परिवर्तन करना होगा।

विजय प्रतापः यह पारिस्थितिकीय उत्तर है। मैं उसका राजनीतिक–सामाजिक संगठन के रूप में उसकी प्रतिक्रिया सुनना चाहता हूं।

सुधिरेन्द्र : अभी तक इस विषय पर किसी फैसले पर नहीं पहुंचा गया है, उस स्तर तक पहुंचना इतना आसान नहीं है। यह एक लंबी प्रक्रिया के बाद ही संभव हो सकता है। गुरू जी इस बात को मानेंगे कि इस पूरे हादसे में लाभ हुआ, इसे हादसा नहीं कहना चाहिये क्योंकि बाढ़ के आये हुए दो महीने हो गये हैं। इस विषय में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में आना शुरू हो गया है। गुरूजी के 30 साल के काम के बाद हम

लोग इस कोर्स को खड़ा कर पा रहे हैं। हमने दो महीने तक इसे संभाले रखा और अब इसे और अधिक संभालने की जरूरत है। क्योंकि कोसी का डिस्कोर्स कोई छोटा डिस्कोर्स नहीं है और इसका इतनी जल्दी अंत भी नहीं हो सकता।

विजय प्रतापः सर ! इस बारे में आपका क्या विचार है ?

मिश्रा जीः हम लोग किसी आंदोलन की शुरूआत करेंगे या फिर उसके लिए कोई भूमिका तैयार करेंगे तो यह विचार उन लोगों के प्रति सही श्रद्धांजली नहीं होगा जिन्होंने इसे अब तक जिंदा रखा है। हम लोगों ने जो कुछ सीखा वो तो उन्हीं लोगों के जीवंत अनुभवों से सीखा है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि आने वाले दस सालों में उनमें से कोई भी जिंदा नहीं बचेगा। इन तीस–तीस हजार लोगों ने बड़ी–बड़ी लड़ाइयां लड़ी हैं, इन्होंने मुख्यमंत्री को ही छोटा साबित कर दिया है, इन्होंने राजेन्द्र प्रसाद को काले झण्डे दिखाये। इस प्रकार वो सभी काम हो चुके हैं कोई भी काम बाकी नहीं बचा है। लेकिन हमारे गुरूजी परमेश्वर कुंर जी जो कि पिछले दो वर्ष पहले गुजर चुके हैं वो कहते थे कि 'आप ऐसी सरकार से नहीं लड़ सकते जिसने कोई काम करने के लिए अपना मन बना लिया हो' और उसके पास आंदोलन को दबाने की सारी शक्तियां मौजूद हों। जो बात ही करने को तैयार न हो उससे लड़ना बहुत कठिन है। तो ऐसी स्थिति में ऐसा काम करना बहुत ही बड़ा काम है वह इतनी आसानी से नहीं हो सकता है। इसमें लोगों से जितना हो सकता है वो उन्होंने किया, वे वाद–विवाद के माध्यम से जितना समझा सकते थे उतना उन्होंने समझाया। लेकिन मैंने देखा है कि अक्सर ऐसा होता है कि जब कोई आदमी किसी ऊंची सीट पर पहुंच जाता है तो वो वैसा ही करता है जैसा कि सभी लोग करते हैं, ऐसे में तो ऐसा भी होता है कि हमारा अपना आदमी ही बदल जाता है। हमारे मंत्री थे 'गणेश प्रसाद यादव' वो कभी बहुत परिवर्तनकारी आदमी माने जाते थे, एक बार जब हमारी उनसे मुलाकात हुयी तो हमने उसने कहा कि आप जैसे लोगों के सत्ता में होते हुए भी इस तरह के काम कैसे हो जाते हैं ? आखिर इस परिवर्तन का कारण क्या है ?

हमने पूछा कि जब तक आप यहां हमारे साथ होते हैं तब तक तो अपनी बात कहते हैं। लेकिन सत्ता में होने के बाद आप उल्ट बात करते हैं तो आप ये बताइए कि आपको ऐसा मोहनी मंत्र किसने दिया है ? आप किसी भी योजना को हमारे सामने इस तरह से रखते हैं जैसे कि सोना ही बरसने वाला हो इसके अलावा कुछ नहीं होगा। तो ऐसे में आप लोग सोना बरसाना चाहते हैं और आपको भी लगता होगा कि अब सभी जगह पर सोना बरसायें नहीं तो कम से कम अपने चुनाव क्षेत्र में तो ऐसा कर ही दें। लेकिन जब मैं अपने चुनाव क्षेत्र में जाता हूं तो लोग कहते हैं कि यह बेईमान आदमी है। यदि हम किसी एक स्थान पर कुछ करें और अन्य में कुछ न करें तो भी लोग कहते हैं कि हमने कुछ भी नहीं किया। तो इस तरह से काम चलता रहता है। और जब पांच साल बाद निकलते हैं तो लगता है कि ये तो गलत हो गया, लेकिन तब यही गलती दूसरा आदमी करने को तैयार हो जाता है। इस तरह हम सब जानते हैं कि आप जो कह रहे हैं वो सब सही है।

हमारी रघुवंशी जी के राज्य मंत्री बनने से पहले ग्राम्य विकास पर बात हुयी। शायद उस समय वो ऊर्जा मंत्री बनने वाले थे। मिश्रा जी आप जो भी बात कर रहे हैं वो शब्दशः सही है और ऐसा भी नहीं है कि इस बारे में हमारे पास कोई जानकारी नहीं है, हम हर चीज और बात को समझते हैं और इस बात को हम सार्वजनिक रूप से भी कहते हैं कि राजनीति एक दूसरे ही तरीके से चलती है वो आपके तरीके से कभी भी नहीं चल सकती। जब हम जीत कर जाते हैं तब हम अच्छे, बुरे, मालिक, मजदूर, अध्यापक विद्यार्थी सबके नुमाइंदे होते हैं। उस वक्त हम सिर्फ दलितों के मुलाजिम नहीं होते, हम सबके नुमाइंदे होते हैं। हमको सबके हितों का ध्यान रखना होता है। राजनीति इसी तरह से चलती है। राजनीति करने के लिए गलत काम करना जरूरी होता है। मेरे पास रघुवंश जी की कैसेट है, एक बार मैंने महानंदा पर किताब लिखी थी और वहां पर रघुंवंश जी आये थे, उसमें कुलदीप नैयर जी भी आये थे। तो रघुवंश जी ने कहा कि जब तटबंध तोड़ना हो तो हमें बुलाइये। क्योंकि आपके ऊपर

पुलिस कार्यवाही हो सकती है। पचास तरीके की बातें होंगी हम रहेंगे तो हमको कोई नहीं छूऐगा। उन्होंने कहा कि हमने तटबंध तोड़ने का एक नया तरीका इज़ाद किया। पहले लोग फावड़ा, कुदाल, टोकरी लेकर उसको फीलीकली काटते थे। बाद में हमको लगा कि वो तो पांच हॉर्स पावर का मोनाब्लाक पम्प होता है। उसको ले आओ उसमें डीजल भर दो, उसका जो इनटेक जो बाहर जल जमाव होता है उसमें डाल दो और अंदर नदी वाला भाग जो कि बालू का बना हुआ है वो आउटलेट अडेन्मेन्ट वाला थोड़ी ही देर में मिट्टी काटना शुरू करता है और बाद में वो काट देता है। वो पंप पांच हॉर्स पावर का है उसको दो आदमी लेकर भाग जायेंगें जिसमें कि 125 रुपये से ज्यादा डीजल खर्च नहीं होगा। और जीवन का भी कोई खतरा नहीं है। यदि वो मशीनों की अपेक्षा शारीरिक रूप से ही वो करने का प्रयास करता है तो उसमें पैसा भी ज्यादा लगता है और मेहनत भी ज्यादा होती है।

यदि हम रघुवंशी जी से कहें कि किसी विशेष जगह पर तटबंध काटना है तो उस समय सत्ता का चरित्र दूसरा ही होगा।   असम में चूना वाले मिट्टी के तेल के ड्रम जिसमें चूना भरा होता है उससे गड्ढा खोद देते हैं। और उसे तटबंध में दबा दिया जाता है, आजकल के मौसम में कहीं बारिश नहीं है, बाढ़ नहीं है, फरवरी मार्च के समय और बरसात के समय जब नदी का पानी बढ़ेगा तो चूने से रीएक्ट करेगा चूने से रिएक्ट करेगा तो विस्फोट होगा तो तटबंध अपने आप कट जायेगा कोई खतरा ही नहीं होगा फिर चाहे उसे कोई भी तोड़े। वर्तमान समय में तकनीकी भी विकसित हो रही है हो सकता है आगे नई तकनीक आने वाली है हो सकता है आने वाले समय में रिमोट का भी प्रयोग हो सकता है जिससे हो सकता है वो काम जल्दी ही काम हो जाए।

कुछ साल पहले 1993 में ऐसा ही हुआ कमला का मदेपुर बिहार खुर्द के पास का तटबंध कटा, सरकार के तरफ से वक्तव्य आया कि असमाजिक तत्वों ने काट दिया। कुछ लोगों ने वहां बाकायदा जलूस निकाला और धरना दिया। उन लोगों ने कहा कि यह असमाजिक तत्वों ने नहीं बल्कि हमने काटा। तब सरकार ने कहा कि वो

तो टूट गया। इस पर कोई बहस नहीं करना चाहता। ऐसा तो होता रहता है इलाहबाद कोर्ट एक्सप्रैस हाईवै के बारे में ऐसा ही हो रहा है। इस बारे में हमारे पास एडवोकेट गुप्ता का फोन आया उन्होंने कहा कि उन्होंने सबूत के तौर पर सभी किताबें सौंप दी लेकिन जब जज साहब ने किताब पढ़ी तो उन्होंने कहा कि इसमें निर्णायक बात नहीं लिखी कि संसोधन हो रहा है। इसमें जो कुछ भी लिखा है वाद–विवाद का विषय है और सरकार जो कुछ भी कर रही है वो ठीक ही कर रही है। तो इस प्रकार कुछ भी नहीं हो पाता है तो इससे स्पष्ट है कि सत्ता ने अपना जो भी मन बना लिया उसे संभव बनाने के लिए वो हर संभव प्रयास में लगे रहते हैं।

विजय प्रतापः इसकी कोई रूपरेखा है ?

मिश्रा जीः नहीं ! इस बारे में बहुत से लोगों ने लड़ाइयां लड़ी हैं और वो कहते हैं कि हम लोग एक बार और लड़ेंगे।